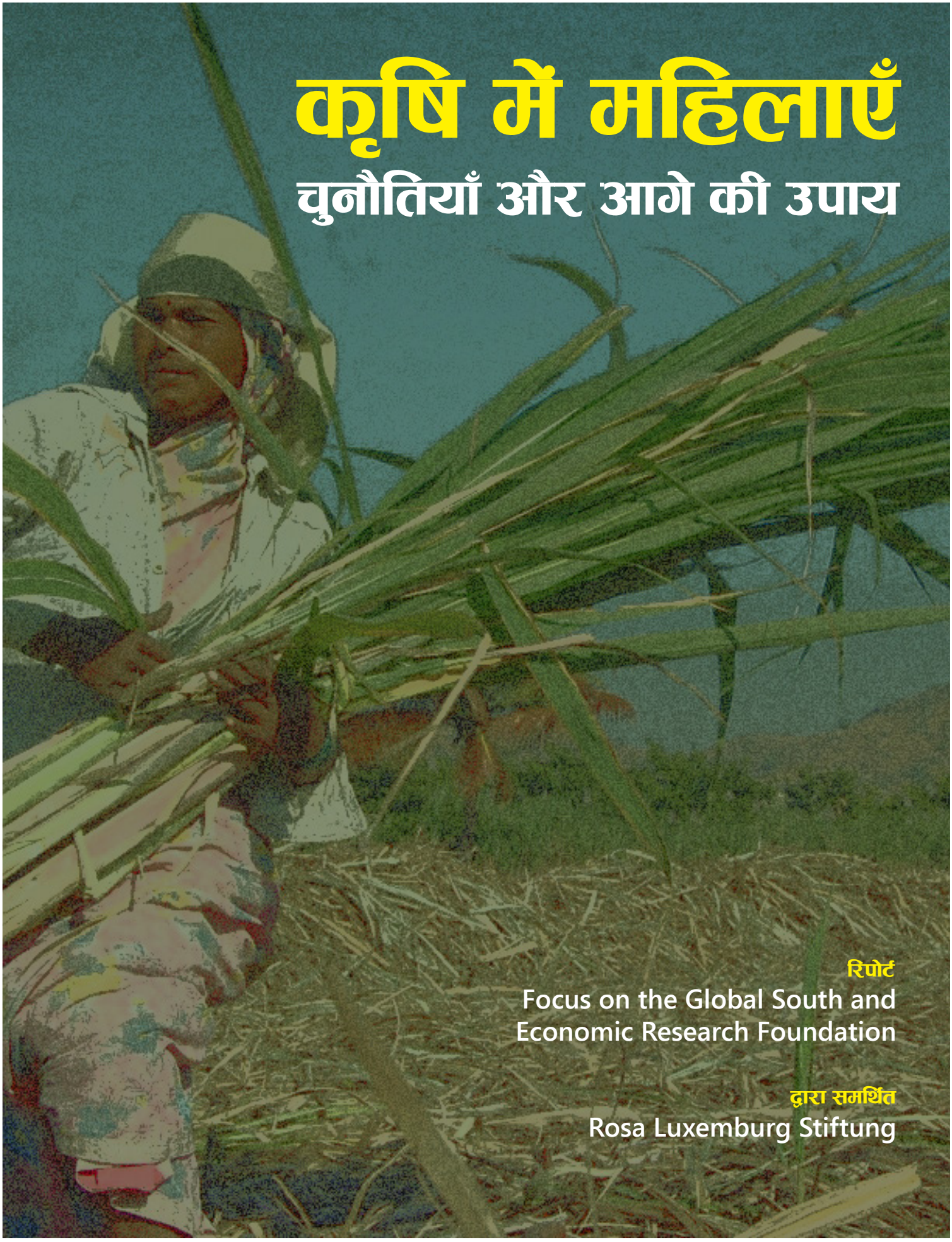

कृषि में महिलाएँ

चुनौतियाँ और आगे की उपाय

रिपोर्ट

Focus on the Global South and
Economic Research Foundation

द्वारा समर्थित

Rosa Luxemburg Stiftung

अगस्त 2019

कृषि में महिलाएँ
चुनौतियाँ और आगे की उपाय

Pre-monsoon rain has come beating down on the field
Under the jasmine tree, the ploughman is working with the drill-plough
One field after the other, to which field should I go
I tell you, son, we shall plant jasmine on the bund
I shall go to your field and stand there
I ask you, son, when did you do this work
I shall go to the field, I shall take a jug for water
Before the bullocks, my ploughman is thirsty

यह रिपोर्ट 10 जुलाई 2019 को नई दिल्ली में आयोजित किए गए एक पैनल चर्चा (गोष्ठी) पर आधारित है। चर्चा का विषय 'कृषि में महिलाएं: चुनौतियाँ और आगे की राह' था।

इसमें निम्नलिखित वक्ताओं ने भाग लिया:
जयति घोष (प्रोफ़ेसर, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय)
जगमती सांगवान (अखिल भारतीय जनवादी महिला समिति (AIDWA) की पूर्व जनरल सेक्रेटरी)
जया मेहता (जोशी अधिकारी इन्स्टीट्यूट ऑफ़ सोशल स्टडीज़)
दीपा सिन्हा (असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, अंबेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली)
नमिता वायकर (मैनेजिंग एडिटर, पीपल्स आरकाईव्स ऑफ़ रूरल इंडिया)
विकास रावल (प्रोफ़ेसर, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय)
वंदना शिवा (नवदान्या)

लेखक: जय विप्र
अगस्त 2019

विषय सूची

परिचय

पृष्ठभूमि

कृषि में महिलाओं के समक्ष चुनौतियाँ

- पहचान, अवैतनिक काम और आधारभूत संरचना तक पहुँच
- भूमि अधिकार
- भूमि की उपलब्धता
- कृषि, खाद्य और पोषण के बीच के जुड़ाव को ख़त्म करना
- डिजिटलाइज़ेशन और कृषि में महिलाएँ

समाधान और आगे की राह

- सहकारी खेती
- मुद्दों को आपस में जोड़ना
- सामाजिक सुरक्षा
- मुद्दा-आधारित संघर्ष

परिचय

भारत में कृषि से जुड़ी महिलाओं को कई स्तरों पर नुक़सान का सामना करना पड़ता है। उनमें से कई के पास भूमि अधिकार नहीं हैं। ऐसे में, कृषि के लिए ज़रूरी आधारभूत ढाँचे तथा क़र्ज़, इनपुट सब्सिडी और सिंचाई जैसे सेवाओं तक उनकी पहुँच नहीं हो पाती। जैसा कि जयति घोष बतलाती हैं, "बतौर कृषि श्रमिक, महिलाओं को पुरुष श्रमिक की तुलना में कम मज़दूरी मिलती है। ऐसा इसलिए नहीं कि महिलाएँ अलग तरह के काम करती हैं। हालाँकि इसमें थोड़ी-सी सच्चाई है। लेकिन एक जैसे काम के संदर्भ में भी, आम तौर पर महिला श्रमिक को पुरुष श्रमिक की तुलना में कम मज़दूरी ही दी जाती है। इसके अलावा सांस्कृतिक/वैचारिक कारक भी महिलाओं की गतिविधियों को सीमित करते हैं। उदाहरण के लिए, वे बड़े बाज़ारों में नहीं जा सकती हैं, हल नहीं जोत सकती हैं। महिला किसानों को सहारा देने के लिहाज़ से मौजूदा सामाजिक सुरक्षा प्रणाली पर्याप्त नहीं है। वैसे भी, बढ़ते कृषि संकट के साथ यह प्रणाली भी सिकुड़ती चली जा रही है।"

ये हालात भयावह हैं। कारण यह है कि भारत में अधिकांश कामकाजी महिलाएं कृषि के क्षेत्र में ही कार्यरत हैं। ग्रामीण इलाक़ों में 73.2% महिलाएं कृषि से जुड़ी हुई हैं। किसान संगठनों ने कृषि संकट और उससे उपजे कष्टों की पृष्ठभूमि में इन मुद्दों के इर्द-गिर्द महिला किसानों को लामबंद किया है। इस पैनल ने भारत में कृषि संकट की प्रकृति, कारणों और समाधानों पर विचार किया। विशेष फ़ोकस महिला किसानों पर रहा।

रिपोर्ट में भारतीय कृषि के महिलाकरण और वि-महिलाकरण के इतिहास की व्याख्या की गई है। इसमें कृषि में महिलाओं के सामने आने वाली समस्याओं का रेखांकन किया गया है। इसमें न केवल स्वीकृति, भूमि अधिकार और सामाजिक

सुरक्षा की अनुपस्थिति जैसी समस्याएँ शामिल की गई हैं, बल्कि इस तथ्य का भी उल्लेख किया गया है कि खाद्य और पोषण को नीति में अलगाने की कोशिश की जाती है। इसके साथ ही, इसमें डिजिटलाइज़ेशन और वित्तीयकरण जैसी नई चुनौतियों पर भी विचार करने की बात की गई है। रिपोर्ट में संकट दूर करने के लिए सुझाए गए समाधानों का रेखांकन भी किया गया है: मिसाल के लिए समस्याओं के आपसी जुड़ाव पर पुनर्विचार करते हुए कृषि को समग्रता में समझना, लेकिन विभिन्न समस्याओं से अलग-अलग निपटने के प्रयास को भी जारी रखना; भूमि अधिकारों की माँग करना, लेकिन साथ ही सहकारी खेती की संभावना की भी तलाश करना ताकि कृषि महिलाओं के लिए व्यवहार्य बन सके जो आमतौर पर छोटी किसान या भूमिहीन मज़दूर हुआ करती हैं; और सामाजिक सुरक्षा प्रणालियों की पुनर्रचना के नए तरीक़ों के बारे में सोचना जिससे भारत के खाद्य उत्पादकों का कल्याण सुनिश्चित हो सके।

पृष्ठभूमि

पिछले तीन दशकों के दौरान और हाल-फ़िलहाल तक, कृषि के काम-काज में महिलाओं की हिस्सेदारी लगातार बढ़ी है। इस परिघटना को भारतीय कृषि का महिलाकरण कहा गया। इस बढ़ोतरी के पीछे के कारण क्षेत्र और फसल के आधार पर भिन्न-भिन्न थे। उदाहरण के लिए, पंजाब और हरियाणा में ऐसा पुरुषों के गाँव छोड़कर बाहर काम करने के लिए जाने की वजह से हुआ। कहना न होगा कि इस मामले में पुरुषों का खेती से पीछे हटना उतने बड़े पैमाने पर नहीं हुआ कि महिलाएं उनकी जगह ले लेतीं। लेकिन इसमें दो राय नहीं कि कृषि में महिला श्रम की हिस्सेदारी ज़रूर बढ़ती गई। दरअसल जुताई, जिसे पुरुष किया करते थे, का मशीनीकरण पहले ही हो चुका था। बाद में कटाई और थ्रेशिंग जैसे

महिलाओं के ज़िम्मे आने वाले काम भी मशीनों द्वारा संपन्न किए जाने लगे। प्रत्यारोपण या रोपाई जैसे काम बचे रह गए थे, जिसे महिला और पुरुष मिलकर करते थे। जब पुरुष गाँव छोड़ बाहर चले गए, तो वे काम भी महिलाओं के ज़िम्मे आ गए। तमिलनाडु जैसे राज्य में कृषि में महिला श्रम की बढ़ती हिस्सेदारी का दौर देखा गया।

विकास रावल ने ऐसी दो प्रवृत्तियों पर रोशनी डाली जो कृषि के महिलाकरण की अवधि में दिखाई देती हैं:
महिलाओं को ख़ासकर वही काम मिलना जारी रहा जिसमें मज़दूरी नहीं मिलती। इसके साथ ही, परिवार में उन्हें ख़ासकर या प्रमुख तौर पर खेत मज़दूर के रूप में मान्यता नहीं मिली।
कुछ काम महिलाओं की हद से बाहर रहे। दक्षिण एशिया में आम तौर पर महिलाएं हल नहीं छूती हैं। खेती का काम छोड़ने के बावजूद पुरुषों ने ही जुताई करना जारी रखा। कुछ दूसरे काम अन्य पितृसत्तात्मक कारणों से महिलाओं से परे रखे गए। उदाहरण के लिए, उपज की ख़रीद-बिक्री या मार्केटिंग के काम पर पुरुषों का ही क़ब्ज़ा बना हुआ है। मंडियों या बाज़ारों में पुरुषों का वर्चस्व है।

महिलाकरण के साथ-साथ कृषि श्रम का अधिक-से-अधिक अस्थाईकरण/आकस्मिकीकरण (कैज़ुअलाइज़ेशन) भी हुआ। दरअसल ये दोनों परिघटनाएँ आपस में जुड़ी हुई हैं। कैज़ुअलाइज़ेशन का महिला श्रमिकों को जुटाने या आकर्षित करने के लिए उपकरण या निमित्त के रूप में इस्तेमाल किया गया। कारण उनका श्रम अपेक्षाकृत सस्ता था। चूँकि महिलाओं के ज़िम्मे घरेलू कामकाज भी था, इसलिए उनसे काम लेने के लिए लचीलापन ज़रूरी था। पीस रेट के काम के इस क़दर व्यापक होने और महिलाओं को ही इस तरह का काम

देने (जैसे कि कॉटन की बिनाई) का यही कारण था।

2011-12 का राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एनएसएस) बताता है कि भारत में चौबीस करोड़ चालीस लाख लोग यानी भारत में कुल श्रमिकों का 50% से ज़्यादा अपनी आजीविका के लिए कृषि के काम से जुड़े हुए हैं। इनमें पंद्रह करोड़ साठ लाख पुरुष हैं और आठ करोड़ अस्सी लाख महिलाएं हैं। जबकि आजीविका की दृष्टि से इनमें से ज़्यादातर के लिए कृषि विश्वसनीय/लाभकारी स्रोत नहीं रह गया: हम यानी हमारी कृषि संकट ग्रस्त हो चुकी है।

अब कृषि में महिलाओं के रोज़गार में भारी गिरावट के संकेत मिल रहे हैं। इसमें से कुछ वास्तविक गिरावट है और कुछ ऐसे कार्यों की तरफ़ वापसी है जिन्हें काम नहीं माना जाता।

पिछले दस वर्षों में, और विशेष रूप से पिछले पाँच वर्षों में, मशीनीकरण के कारण मुख्य रूप से या ख़ास तौर पर महिलाओं द्वारा किए जाने गए काम में गिरावट देखी गई है। इनमें ख़ासकर कटाई और निराई दो ऐसे काम हैं जिनमें मशीनीकरण के कारण महिलाओं की भागीदारी में भारी कमी आई। 2000 के दशक की शुरुआत में बाज़ार में स्ट्रॉ रीपर के आने के साथ फसल की कटाई का मशीनीकरण शुरू हुआ। हालाँकि कंबाईन हार्वेस्टर पहले से मौजूद थे, लेकिन किसान उनका इस्तेमाल करने से हिचक रहे थे। कारण उनका प्रयोग कर पुआल इकट्ठा करना आसान नहीं था। स्ट्रॉ रीपर ने इस कठिनाई को दूर कर दिया। इसलिए इसके आने के बाद कंबाईन हार्वेस्टर को व्यापक रूप से अपनाया गया। इसी तरह, परिष्कृत खरपतवार नाशकों का भी आज व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

अभी भी दो काम ऐसे हैं जो अभी भी हाथों से ही किए जाते हैं, और वह भी ख़ासकर महिलाओं द्वारा। पहला, धान की रोपाई, मशीन से यह काम काफ़ी महँगा पड़ता है। दूसरा, पीस रेट काम का रूप ले लेने के कारण कॉटन, फल,

सब्ज़ी और अन्य उपज को बीनने का काम।

ये अवलोकन बड़े पैमाने के आँकड़े के अनुरूप हैं। ग़ौरतलब है कि पीरियडिक लेबर फ़ोर्स सर्वे (पीएलएफ़एस) के नतीजे जारी होने से पहले आँकड़ों की उपब्धता के लिहाज़ से सात साल का लंबा सूखा पड़ा था। पीएलएफ़एस से पता चलता है कि 15-59 वर्ष की आयु की ग्रामीण महिलाओं में से 24 प्रतिशत कृषि के काम में लगी हुई हैं। हालाँकि, इस सर्वेक्षण के सवालों और उनके पूछे जाने के ढंग के साथ कई दिक़्क़तें हैं। उदाहरण के लिए, सर्वेक्षण में जलावन और चारा इकट्ठा करने जैसी विशेष गतिविधियों से जुड़े सवाल हटा दिए गए। इन अवैतनिक कामों को महिलाएं ही करती हैं और इनमें लगे रहने के कारण वे वैतनिक काम नहीं कर पाती हैं। जिस तरह से सर्वेक्षण ने 'काम की वर्तमान दैनिक स्थिति' अर्थात सर्वेक्षण से पहले के सात दिन के दौरान किए गए कामों को दर्ज किया है, उसमें असंगतियाँ हैं। ऐसे हाल के वर्षों में कृषि में महिलाओं के काम को ठीक से विश्लेषित करने के लिए यह ज़रूरी है कि और भी ज़्यादा और बेहतर प्राथमिक आँकड़े जुटाए जाएँ।

कृषि में महिलाओं के समक्ष चुनौतियाँ

पहचान, अवैतनिक काम और आधारभूत संरचना तक पहुँच

कृषि से जुड़ी महिलाओं के सामने सबसे बड़ी चुनौती यह है कि उन्हें आधिकारिक तौर पर किसान या कृषि श्रमिक की मान्यता प्राप्त नहीं है। जगमती सांगवान ने बताया कि हमारे अधिकारियों के बीच भी प्राय: यह धारणा पाई जाती है कि महिलाएं किसान नहीं हो सकती हैं।

कृषि के क्षेत्र में महिला और पुरुष के बीच की मज़दूरी में काफ़ी फ़ासला है। इसकी एक वजह तो उनके कार्यों की प्रकृति का भिन्न होना है। दूसरी वजह यह है कि घरेलू कामकाज के दायित्व के चलते महिलाएं कृषि से जुड़े वही काम कर पाती हैं जो उनके लिए सुविधाजनक हो। इनके अलावा, महिलाओं के काम को तवज्जो या मान्यता दिए जाने के बावजूद उन्हें मज़दूरी या वेतन नहीं दिया जाता है। पारिवारिक उद्यमों में मान्यता प्राप्त महिला श्रमिकों के बड़े हिस्से को अवैतनिक श्रमिक के रूप में परिभाषित किया गया है। अवैतनिक कार्य की प्रकृति विशेष प्रकार के कार्यों पर अधिक केंद्रित हो गई है; जैसे कि देखभाल, जलावन इकट्ठा करना, सब्ज़ी उगाना, और सबसे महत्वपूर्ण बात, पानी लाना – जो अपने-आप में काफ़ी समय लेता है। कई क्षेत्रों में सूखे की स्थिति है। इसका सीधा सा मतलब यह है कि पानी की व्यवस्था करने में ही महिलाओं का काफ़ी समय बीत जाता है। ऐसे में, यदि वैतनिक काम उपलब्ध हो भी तो वे उसे नहीं कर पाती हैं।

सांस्कृतिक अड़चनों के साथ-साथ औपचारिक तौर पर श्रमिक न माने जाने के कारण महिलाएँ न केवल किसानों के लिए मौजूद सरकारी योजनाओं से वंचित रह जाती हैं बल्कि वे संस्थागत क़र्ज़, कृषि इनपुट्स और बाज़ार तक भी नहीं पहुँच पाती हैं।

भूमि अधिकार

महिला किसानों के लिए अपनी ज़मीन पर अधिकार नहीं होना आम बात है।

इससे उनकी आजीविका असुरक्षित हो जाती है। महिलाओं के भूमि अधिकार का मुद्दा काफ़ी गंभीर है। लेकिन महिला आंदोलनों या श्रमिक आंदोलनों ने उसे यथोचित तवज्जो नहीं दी। हालाँकि 2018 में अखिल भारतीय किसान सभा (एआईकेएस) द्वारा नासिक से मुंबई तक आयोजित लंबे मार्च में इस मुद्दे की गूँज सुनाई दी। स्वाभाविक है कि इसे आवाज़ देने वालों में मुख्य रूप से महिलाएँ ही थीं।

ऐसा भी पाया गया है कि ज़मीन पर हक़ होने के बावजूद महिलाओं को वास्तव में उस पर नियंत्रण करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। 2005 में हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम में संशोधन कर महिलाओं को पैतृक संपत्ति का समान अधिकारी बना दिया गया। कुछ राज्यों ने जहाँ अभी तक इसकी सूचना तक नहीं दी है, वहीं दूसरे राज्यों ने इससे बचने के लिए तरीक़े ढूँढ लिए हैं। भूमि अधिकारों के लिए संघर्ष का साहस करने वाली महिलाओं को प्रतिक्रिया स्वरूप हिंसा का सामना करना पड़ता है, जिसमें डायन क़रार देकर और इज़्ज़त के नाम पर हत्याएँ तक शामिल हैं। देश भर में लैंगिकता के आधार पर भूमि अधिकार संबंधी आंकड़ों की अनुपलब्धता संघर्ष को और भी कठिन बना देती है।

भूमि की उपलब्धता

जया मेहता ने कहा, "जितनी ज़मीन उपलब्ध थी वह भारत की कृषक आबादी की आजीविका के लिहाज़ से पर्याप्त नहीं थी। घर संचालन हेतु खेती के लिए 1991-92 में 12 करोड़ 50 लाख हेक्टेयर ज़मीन थी, लेकिन 2012-13 में वह घटकर 9 करोड़ 40 लाख हेक्टेयर हो गई।

ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 5% परिवार भूमि-हीन हैं। 35% के पास केवल निवास भूमि है। 30% परिवार ऐसे हैं जिनके पास औसतन 0.2 हेक्टेयर और 13% परिवारों के पास औसतन 0.7 हेक्टेयर भूमि है। 10% परिवारों के पास 1.3

हेक्टेयर भूमि है। केवल 7% परिवार ऐसे हैं जिनके पास 2 हेक्टेयर से ज़्यादा भूमि है। जबकि परिवारों में उपलब्ध श्रम को ठीक से खपाने के लिए कम-से-कम 2 हेक्टेयर भूमि ज़रूरी है। इसका मतलब यह है कि भूमि वाले परिवारों में 93% के पास इतनी कम भूमि है कि कोई परिवार ख़ुद अपने सभी सदस्यों को उपयोगी रूप से खेती के काम में नियोजित करने में सक्षम नहीं है। कृषि संकट का तब तक कोई समुचित समाधान नहीं हो सकता है जब तक कि हम भूमि की अनुपलब्धता और असमान वितरण को संबोधित नहीं करते।

कृषि, खाद्य और पोषण के बीच के जुड़ाव को ख़त्म करना

वंदना शिवा ने बताया कि कैसे खाद्य और कृषि के बीच के जुड़ाव को ख़त्म करने की कोशिश की जा रही है, मानो कृषि का लोगों को खिलाने से कोई लेना-देना ही नहीं हो। कृषि को मुनाफ़ा देने या न देने वाले व्यवसाय भर में सीमित किया जा रहा है। खेती को खाद्यान्नों की जगह जैव-ईंधन की सामग्री और पशु-खाद्य के उत्पादन की तरफ़ उन्मुख किए जाने पर ज़्यादा ज़ोर है। ख़ासकर, भारत के गन्ना बेल्ट पर जैव-ईंधन के लिए खेती पर अधिक दबाव है। इस तरह के रुख से देश का कृषि-आधार कमज़ोर होगा, जिससे महिला किसान सबसे बुरी तरह प्रभावित होंगी।

दीपा सिन्हा ने कहा, "खाद्य से पोषण के जुड़ाव को भी ख़त्म किया जा रहा है। पोषण का तेज़ी से केवल वैज्ञानिकों और डॉक्टरों की गतिविधि के रूप में मेडिकलीकरण हो रहा है। यदि पोषण की दृष्टि से ही बात करें तो उसके खाद्य से जुड़े होने की हक़ीक़त पर ज़ोर दिया जाना ज़रूरी है। उदाहरण के लिए, स्थानीय खाद्य को न केवल किसानों की मदद करने के लिए बढ़ावा दिया जाना चाहिए, बल्कि इसलिए भी कि वह स्वास्थ्यवर्धक होता है। अभी हो यह रहा है कि खाद्य-वितरण का काम बड़े निजी निगम अपने हाथों में ले रहे हैं और इसलिए डिब्बाबंद

और अति-प्रोसेस्ड खाद्य-पदार्थों को बढ़ावा मिल रहा है। इसकी परिणति कुपोषण और मोटापे के अलावा इंसेफ़ेलाइटिस, मधुमेह और उच्च रक्तचाप जैसे संचारी और ग़ैर-संचारी रोगों में हो रही है। इसके अलावा, कुपोषण और मोटापे की ओर अग्रसर हैं। अब ग़रीब भी मधुमेह और उच्च रक्तचाप से बचे नहीं रह गए हैं, जिसकी वजह अपर्याप्त और एक ही तरह के खाद्य-पदार्थों का सेवन करना है।

प्रशासनिक संरचना बनाते समय भी कृषि, भोजन और पोषण के बीच के जुड़ाव की उपेक्षा की जाती है। इस मामले में सरकार के महकमे अलग-अलग काम करते हैं। उदाहरण के लिए, महिला और बाल विकास मंत्रालय के ज़िम्मे पोषण है। लेकिन उसका कृषि और उपभोक्ता मामला मंत्रालय (जिसके तहत खाद्य और सार्वजनिक वितरण विभाग भी आता है) के साथ कोई संपर्क नहीं है।
इन तीनों के बीच के जुड़ाव की उपेक्षा से महिला किसान प्रभावित होती हैं, कारण ज़्यादातर छोटे किसान महिलाएँ होती हैं। उनमें से ज़्यादातर खाद्यान्नों की खेती करती हैं, जिनमें दलहन, मोटे अनाज और बारिश पर निर्भर फसलें शामिल हैं। प्रोसेस्ड पैकेट-बंद खाद्य-पदार्थों द्वारा कुपोषण को दूर करने का प्रयास किया जाता है। महिलाओं को किसान के रूप में मान्यता देना, और इस मान्यता के माध्यम से बुनियादी ढाँचे के निर्माण से यह सुनिश्चित होता है कि हम खाद्य उत्पादकों के हितों को पोषण से अलग मुद्दे के रूप में न देखें।

डिजिटलाइज़ेशन और कृषि में महिलाएँ

जैसा कि वंदना शिवा ने बताया है कि महिला किसानों के लिए नई और संभवतः सबसे ख़तरनाक चुनौतियाँ डिजिटलीकरण और वित्तीयकरण हैं। डिजिटलीकरण कृषि-इनपुट्स-बाज़ार में पहले से ही मौजूद एकाधिकार की स्थिति को और भी मज़बूत कर रहा है। बेयर और मोनसेंटो जैसी दिग्गज कंपनियों का विलय इसकी

बानगी है। भारतीय कृषि बाज़ार के डिजिटलीकरण का मतलब है कि अब इस क्षेत्र को बड़ी पूँजी और वेंचर-कैपिटल (जोखिम-भरा) समर्थित उद्यमों के लिए उपलब्ध कराया जा रहा है। डिजिटल मंचों के आने से कृषि आपूर्ति श्रृंखला में बीच स्थित छोटे व्यापारियों का अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा। यानी और भी ज़्यादा लोगों की आजीविका मारी जाएगी। किसानों को उनके अपने ही आँकड़े वापस माल या कमोडिटी के रूप में बेचे जा रहे हैं। मनरेगा को निरंतर फ़ंड से वंचित किया जा रहा है जिससे महिला किसान और श्रमिक पहले की तुलना में अधिक असुरक्षित हो गए हैं।

2019-20 के केंद्रीय बजट में किसानों के क़र्ज़ के समाधान के लिए शून्य बजट खेती का प्रस्ताव किया गया। पैनलिस्टों का मानना था कि इस फ़िकरे को भ्रमित करने और कृषि में निवेश के मुद्दे से ध्यान भटकाने लिए फैलाया जा रहा है। राज्य स्तरीय शून्य बजट कार्यक्रमों में बीएनपी परिबास और वॉलमार्ट फ़ाउंडेशन जैसों की भागीदारी भी चिंता का विषय है। आपूर्ति के काम को जन वितरण प्रणाली छूटों की जगह डिजिटल किए जाने के प्रयास हो रहे हैं। आधारभूत खाद्य पदार्थों के उत्पादन, परिचालन और वितरण के काम में सीधी संलग्नता के अपने दायित्व से सरकार पीछे हट रही है। शून्य बजट का मतलब शून्य ख़र्च या निवेश नहीं है। और वैसे भी अभी यह सुपरिभाषित नहीं है। यानी इसका आशय स्पष्ट नहीं है और न ही यह कोई बड़ी उम्मीद बंधाता है।

कमोडिटी ट्रेडिंग के लिए राह खोलकर भी कृषि के वित्तीयकरण की कोशिश की जा रही है। इससे खाद्य और कृषि के बीच का फ़ासला और भी बढ़ेगा, क्योंकि उत्पादन उनके अनुमानों या इच्छाओं से प्रभावित होगा जिन्हें इसके नतीजों से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। यह और कुछ नहीं बल्कि बिना किसान के खेती का एक तरीक़ा है।

समाधान और आगे की राह

जैसा कि 1946-47 में बँटाईदारों द्वारा खेत के मालिकों को दिए जाने वाले हिस्से को कम करने के लिए छेड़े गए तेभागा आंदोलन जैसे किसान आंदोलन ज़ाहिर करते हैं, मुद्दा जब खाद्य या भोजन से जुड़ा हो तो आंदोलन में महिलाएँ आगे रहती हैं। महिला किसानों की समस्याओं के किसी भी तरह के समाधान में महिला आंदोलन की केंद्रीय भूमिका स्पष्ट है। चर्चा में भाग लेने वाले वक्ताओं ने आर्थिक और सामाजिक नीतियों के स्तर पर समाधान सुझाए और आंदोलन की रणनीति पर अपनी बातें सामने रखीं।

सहकारी खेती

भूमि की उपलब्धता की समस्या को हल करने के लिए भूमि अधिकार अपने-आप में पर्याप्त नहीं हैं। बहुत सारी महिला किसान खाद्य पदार्थों की सीधी ख़रीदार हैं। इसलिए यदि जन वितरण प्रणाली को दुरुस्त किए बिना खाद्यान्नों की लोगों की माँग के हिसाब से उचित क़ीमत तय किए जाने से महिला किसानों की हालत और भी ख़राब होगी।

यदि पर्याप्त भूमि उपलब्ध नहीं है, तो हम आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर बड़ी आबादी के लिए क्या उपाय किया जा सकता है? जया मेहता ने कहा कि चूँकि 93% परिवारों के पास 53% भूमि है, इसलिए श्रम और ज़मीन को एक साथ लाने के लिए समूह गठित किए जाने चाहिए। इसके साथ-साथ श्रम संगठनों तथा सीमांत और छोटे किसानों की सहकारी समितियों के बीच समन्वय भी ज़रूरी है। समिति की संरचना भी काफ़ी मायने रखती है। इसका बुनियादी सिद्धांत यह होना चाहिए कि सभी भागीदार या हिस्सेदार एक समान हैसियत के हैं। कारण असमानता की स्थिति में मज़बूत का दबदबा क़ायम होने लगता है। सरकार के समर्थन की भी ज़रूरत होगी, क्योंकि बीज, खाद, भंडारण, परिवहन और मार्केटिंग जैसे इनपुट और आउटपुट संपर्क कृषि श्रमिकों तथा छोटे और सीमांत किसानों की इन सहकारी समितियों या समूहों के लिए आरक्षित होने चाहिए। मौजूदा समय में इन सभी संपर्कों पर घरेलू और बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ हावी हैं।

व्यवहार्य होने के लिए, सहकारीकरण को एक राष्ट्रव्यापी आंदोलन होना पड़ेगा। इसे अपने उत्पादन और भागीदारी के क्षेत्र का विस्तार करना होगा और कृषि बाहर निकल कर समूची आर्थिक उत्पादन संरचना को बदलना होगा। अर्थव्यवस्था में संपूर्ण उत्पादन स्ट्रकचर को बदलने के लिए कृषि।

अर्थशास्त्री बीना अग्रवाल के मुताबिक़ "महिलाएँ जायदाद से वंचित किसान और वंचित श्रमिक हैं।" बतौर किसान अवांछनीय परिस्थियों में होने के कारण महिलाएँ सामूहिक कार्य की तरफ़ सहज उन्मुख हो सकती हैं। वे गाँव, जहाँ से पुरुष पलायन कर चुके हैं और खेती महिलाओं के ज़िम्मे छोड़ गए हैं, वहाँ सहकारिता और सामूहिकता के लिए पहल की जा सकती है।

एक उदाहरण जहाँ महिलाओं के सामूहिक पहल ने मूर्त रूप लिया है वह है केरल का कुदुंबश्री मिशन। बाहरी प्रवासन, कृषि मज़दूरी में वृद्धि, शिक्षा के उच्च स्तर और अन्य सामाजिक सुविधाओं के कारण केरल में भूमि, उत्पादन के कारक के रूप में बहुत लोकप्रिय नहीं है। वहाँ बहुत सी ज़मीन अचल संपत्ति के रूप में थी। साथ ही, काफ़ी ज़मीन परती पड़ी हुई थी। 1998 में कुदुंबश्री का उद्घाटन किया गया था। इसकी योजना देश के बाक़ी हिस्सों में महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों की शुरुआत के साथ बनाई गई थी। इसकी शुरुआत किफ़ायत, बचत और आमदनी देने वाली गतिविधियों से हुई। कुदुंबश्री समूहों का स्थानीय स्व-शासन के साथ घनिष्ठ समन्वय था। उन्होंने सामाजिक और योजना (प्लानिंग) गतिविधियों पर काम करना शुरू कर दिया। कुदुंबश्री की महिलाएँ भूमिहीन परिवारों या कम ज़मीन वाले परिवारों की थीं। उन्होंने ज़मीन को एकीकृत किया, उसे सामूहिक रूप से पट्टे पर दिया, और सामूहिक खेती करनी शुरू की। इस पहल को राज्य का समर्थन प्राप्त था। आज केरल में 3,20,000 महिलाएँ 59,478 समूहों में संगठित हैं और 14 ज़िलों में कुल 43,375 हेक्टेयर ज़मीन पर वे खेती कर रही हैं। इनपुट और मार्केटिंग का काम कुदुंबश्री मिशन द्वारा किया जा रहा है।

कुदुंबश्री का एक महत्वपूर्ण प्रभाव यह रहा है कि इसने अपने सदस्यों के दृष्टिकोण को दल दिया है और उनमें आपात स्थिति से मिल-जुल कर निपटने की हिम्मत दी है। हालाँकि दूसरे राज्यों में परिस्थितियाँ केरल के ही समान नहीं हैं और

इसे ध्यान में रखते हुए ही समुचित पहल की जानी चाहिए। लेकिन यह उदाहरण यह तो जता ही देता है कि वंचित महिलाएँ, देश में सहकारी और सामूहिक आंदोलन का हरावल बनने का सामर्थ्य रखती हैं।

मुद्दों को आपस में जोड़ना

आंदोलनों के लिए कृषि, खाद्य और पोषण के मुद्दों को आपस में फिर से जोड़ना ज़रूरी है। भोजन के अधिकार को भोजन और पोषण के अधिकार के रूप में देखा जाना चाहिए; जैसा कि दीपा सिन्हा ने बताया कि भोजन के अधिकार का अभियान, माँगों को कैसे रचनात्मक रूप से जन वितरण प्रणाली के आस-पास उठाने का प्रयास कर रहा था। सबसे पहले स्थानीय उपयोग के लिए ही जन वितरण प्रणाली की पुनर्रचना से भारतीय खाद्य निगम की ख़रीद प्रक्रिया बदलेगी। इसके साथ ही, लाभार्थियों के लिए विकल्प भी खुलेंगे। लेकिन इस तरह का बदलाव धीरे-धीरे और सावधानी से लाना होगा, क्योंकि कई राज्य खाद्यान्न की कमी से ग्रस्त हैं। इसी तरह, स्कूल की मिड-डे भोजन योजना के मेन्यू में स्थानीय रूप से उपलब्ध खाद्य-पदार्थों को शामिल कर उसे अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है। इस योजना को महिलाओं की आजीविका से जोड़ा जा सकता है। उदाहरण के लिए, ब्राज़ील के फ़ोमे ज़ीरो (ज़ीरो हंगर) कार्यक्रम को लिया जा सकता है। उसमें यह प्रावधान था कि स्कूल के लिए आपूर्ति किए जाने वाले भोजन का 30% हिस्सा पाँच किलोमीटर के दायरे से होना चाहिए। इस प्रावधान के कारण स्थानीय तौर पर कोल्ड स्टोरेज जैसे बहुत सारे बुनियादी ढाँचे वजूद में आए। बाल देखभाल केंद्र के रूप में वहाँ एक बाज़ार था। इससे पारिवारिक कृषि की उपयोगिता और भूख, इन दोनों मुद्दों के बीच जुड़ाव मुमकिन हुआ। साथ ही, उनके समाधान में भी काफ़ी प्रगति हुई।

भूमि अधिकारों के संघर्ष में पैतृक से इतर भूमि अधिकारों को भी शामिल किया जाना चाहिए। वन संपदा अधिनियम जैसे प्रावधानों के ज़रिये सामुदायिक संपत्ति संसाधनों पर नियंत्रण के लिए संघर्ष किया जाना चाहिए। कृषि के साथ संबद्ध मत्स्य-पालन जैसे क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं के समक्ष अन्य प्रथागत अधिकारों से जुड़े मुद्दे होंगें, जिन्हें आंदोलनों के माध्यम से उठाया जाना चाहिए।

सामाजिक सुरक्षा

कृषि से जुड़ी महिलाओं के लिए सामाजिक सुरक्षा में स्कूल, स्वास्थ्य-सेवा और पेंशन शामिल हैं। ये उन महिलाओं के लिए बेहद ज़रूरी हैं जिन्हें श्रमिक नहीं माना जाता। 2018 में श्रम मंत्रालय द्वारा सामाजिक सुरक्षा संहिता का जो मसौदा जारी किया गया है वह श्रमिक-केंद्रित है और उसमें योगदान-आधारित पेंशन, स्वास्थ्य बीमा आदि का प्रावधान है। लेकिन श्रमिक को इतना सीमित रहकर परिभाषित किया गया है कि महिला श्रमिक बाहर रह जाती हैं। इसलिए कृषि से जुड़ी महिलाओं के मद्देनज़र विभिन्न तरह की सामाजिक सुरक्षा में निवेश ज़रूरी है:

पोषण : कोल्हू के बैल की तरह कठिन मेहनत के कारण महिला किसानों का कुपोषित रहना एक चिरस्थाई मुद्दा है। अर्थशास्त्रियों का मानना है कि महिलाओं के पोषण में निवेश से बच्चों का कुपोषण भी कम होता है। इसलिए सार्वजनिक जन सेवाओं में सुधार और उनकी माँग के मुद्दे पर श्रमिक आंदोलनों और महिला समूहों को एकजुट होना चाहिए। इसके लिए, प्रति एकड़ उपज की जगह प्रति एकड़ पोषण का नज़रिया अपनाया जा सकता है।

बच्चों की देखभाल : फ़िलहाल बच्चों की देखभाल करना केवल महिलाओं की ज़िम्मेदारी है। बिहार में जून 2019 में इंसेफ़ेलाइटिस से मरने वाले बच्चों का हालिया मामला कृषि और पोषण के बीच संबंध का एक उदाहरण है। बच्चे रात

को भूखे पेट सो जाते थे और सुबह अपनी माँओं के साथ लीची बीनने (जो कि पीस रेट का काम है) जाया करते थे। भूखे पेट सोने के कारण उनका शुगर स्तर कम रहता था। ऐसे में लीची खाने से उनकी हालत ख़राब होती जा रही थी। बच्चों की देखभाल की ज़िम्मेदारी समाज और सरकार की है और इसलिए, इस तरह की माँग उठाई जानी चाहिए।

यह सही है कि ये निवेश शून्य बजट नहीं हैं। इनके लिए अच्छी-ख़ासी रक़म चाहिए, लेकिन इनसे होने वाले फ़ायदे कहीं ज़्यादा बढ़कर हैं। सरकार का सामाजिक सुरक्षा निवेश से हाथ पीछे खींचना ग्रामीण महिलाओं लिए बड़ी चुनौती का सबब रहा है। इसके साथ-साथ निजीकरण, कल्याण-कार्य का बीमा मॉडल, और सब्सिडी की जगह नकद हस्तांतरण ने इस चुनौती को और भी बढ़ा दिया है।

मुद्दा-आधारित संघर्ष

जयति घोष ने कहा कि मुद्दों के आधार पर अलग-अलग आंदोलन छेड़ने की ज़रूरत है। इसका मतलब यह नहीं कि उनके बीच के अंतर्संबंधों की उपेक्षा की जाए। मुद्दा-आधारित आंदोलन का तरीक़ा बड़ी संख्या में सहयोगियों को अस्तित्व में लाएगा। नमिता वायकर ने महाराष्ट्र और दिल्ली के मार्च (अभियान) में महिलाओं द्वारा उठाई गई माँगों के बारे में बात की, जिसमें किसान के रूप में मान्यता और भूमि अधिकार भी शामिल थे। बड़े किसान आंदोलनों में महिलाओं के मुद्दों को उजागर करते रहना ज़रूरी है।

जगमती सांगवान ने महिला किसानों के लिए संगठन और चेतना की आवश्यकता पर बात की। उन्होंने बताया कि भूमि अधिकारों जैसी विवादास्पद माँगें हिंसक प्रतिक्रियाओं को जन्म देती हैं। ऐसे में अन्य संबंधित मुद्दों के मध्य से महिलाओं को जागरुक किया जा सकता है। दमन के ख़िलाफ़ संघर्ष में महिलाओं की

आर्थिक स्वतंत्रता भी मददगार साबित होती है।

नई चुनौतियों के उभरने के साथ-साथ पुरानी चुनौतियों के विकराल होते जाने से कृषि संकट के और भी ज़्यादा गहराने की संभावना है। ऐसे में, बड़े पैमाने पर नीतिगत बदलाव के न लागू किए जाने की सूरत में, इस संकट का सबसे अधिक ख़ामियाज़ा पहले से ही ख़स्ताहाल महिलाओं को ही भुगतना पड़ेगा। महिलाओं और श्रमिक आंदोलनों को चाहिए कि वे एक साथ लामबंद हों, मुद्दों को उठाते वक़्त रचनात्मक रूप से सोचें और अपनी माँगें इस तरह रखें जिससे कृषि, खाद्य, पोषण और काम के बीच का जुड़ाव मज़बूत होकर उभर कर सामने आए न कि कमज़ोर पड़े।

The Grindmill Songs Project (2017). The Farmer and the Rain Song. *People's Archive of Rural India.* Available at: https:// ruralindiaonline.org/articles/the-farmer-and-the-rain-song

Ministry of Statistics and Programme Implementation (2019). Periodic Labour Force Survey, 2017-18. Available at: HYPERLINK "http://www.mospi.gov.in/sites/default/files/publication_reports/Annual%20Report%2C%20PLFS%202017-18_31052019.pdf" \hhttp://www.mospi.gov.in/sites/default/files/publication_reports/Annual%20Report%2C%20PLFS%202017-18_31052019.pdf

Vepa, S. S. (2005). Feminisation of agriculture and marginalisation of their economic stake. *Economic and Political Weekly,* 2563-2568. Available at: HYPERLINK "https://www.jstor.org/stable/4416785" \hhttps://www.jstor.org/stable/4416785

Mehta, C. R., Chandel, N. S., Senthilkumar, T., & Singh, K. K. (2014). Trends of agricultural mechanization in India. *Economic and Social Commission for Asia and the Pacific (ESCAP) Policy Brief,* 2

. Agarwal, Bina. (1988). Who sows? Who reaps? Women and land rights in India. *The Journal of Peasant Studies,*
15(4), 531-581

Ministry of Statistics and Programme Implementation (2014). Employment and Unemployment Situation in India. *NSS 68th* Round. Available at: HYPERLINK "http://mospi.nic.in/sites/default/files/publication_reports/nss_report_554_31jan14.pdf" \hhttp://mospi.nic.in/sites/default/files/publication_reports/nss_report_554_31jan14.pdf.

Ministry of Statistics and Programme Implementation (2019). Periodic Labour Force Survey, 2017-18. Available at: HYPERLINK "http://www.mospi.gov.in/sites/default/files/publication_reports/Annual%20Report%2C%20PLFS%202017-18_31052019.pdf" \hhttp://www.mospi.gov.in/sites/default/files/publication_reports/Annual%20Report%2C%20PLFS%202017-18_31052019.pdf

Dogra, ChanderSuta. (2015). Haryana's Outlawed Daughters. *The Indian Express.* Available at: HYPERLINK "https://indianexpress" \hhttps://indianexpress. com/article/india/india-others/the-sunday-story-haryanas-out-lawed-daughters/

Masoodi, Ashwaq. (2014). Witch Hunting | Victims of Superstition. *Livemint.* HYPERLINK "https://www.livemint.com/Politics/" \hhttps://www.livemint.com/Politics/ Nnluhl4wjhiAAUklQwDtOL/Witch-hunti ng--Victims-of-superstition.html

Chhabra, Esha. (2011). The Sticky Challenge Facing Africa. *The Guardian.* Available at: HYPERLINK "https://www.theguardian.com/" \hhttps://www.theguardian.com/ global-development/poverty-matters/2011/dec/20/therapeutic-food-famine-relief-africa

Budget 2019-2020 (2019). Speech of Nirmala Sitharaman, Minister of Finance. Available at: HYPERLINK "https://bsmedia.business-standard.com/_media/bs/data/general-file-upload/2019-07/Budget_Speech.pdf" \hhttps://bsmedia.business- standard.com/_media/bs/data/general-file-upload/2019-07/Budget_Speech.pdf

ET Bureau. (2018). Walmart offers a $2 million seed for AP farmers. *Economic Times.* Available at: HYPERLINK "https://conomictimes" \hhttps://conomictimes. indiatimes.com/small-biz/sme-sector/walmart-offers-a-2-million-seed-for-ap-farmers/articleshow/64773548. cms?from=mdr

Ghosh, Jayati. (2010). The unnatural coupling: Food and global finance. *Journal of Agrarian Change,* 10(1), 72-86.

Agarwal, Bina (1998). Disinherited peasants, disadvantaged workers: a gender perspective on land and livelihood. *Economic and Political Weekly,* A2-A14.

Kudumbashree. Collective Farming Details. Available here: HYPERLINK "http://www.kudumbashree.org/storage/cmspages/" \hhttp://www.kudumbashree.org/storage/cmspages/ downloads/1166639539_Collective%20Farming%20Details.pdf

Wittman, H., &Blesh, J. (2017). Food Sovereignty and Fome Zero: Connecting Public Food Procurement Programmes to Sustainable Rural Development in Brazil. *Journal of Agrarian Change, 17(1), 81-105*

10 जुलाई 2019 को हुए एक पैनल डिस्कशन पर आधारित यह रिपोर्ट भारत की कृषि में महिलाओं की चुनौतियों के बारे में बात करती है। महिलाकरण के एक लंबे दौर को देखने के बाद, भारतीय कृषि अब वि-महिलाकरण की स्थिति में है। यह रि पोर्ट एक बड़े कृषि संकट पर भी ग़ौर करती है, जिसका सबसे ज़्यादा असर महिला किसानों और मज़दूरों पर पड़ता है।

यह रिपोर्ट कृषि में कार्यरत महिलाओं की निम्नलिखित चुनौतियों के बारे में बात करती है-
आधिकारिक रूप पर किसान या मज़दूर के तौर पर पहचान पाने में असमर्थता और श्रेय की कमी, सरकारी योजना और मार्किट लिंकेज जैसे मुद्देस महिलाओं को भूमि अधिकार ना मिलनास महिला किसानों के साथ(साथ सभी किसानों के पास कृषि के लिए पर्याप्त भूमि ना होनास कृषि, खाद्य पदार्थ और पोषण का लगातार होता अलगाव जो समृद्धि को उत्पादन से अलग करता हैस और कृषि के डिजिटलीकरण और वित्तीयकरण की बढ़ती चुनौतियाँ।

चर्चा में बताए गए निम्नलिखित सुझावों को रिपोर्ट में शामिल किया गया है-
छोटे और हाशिये पर रहने वाले किसानों के लिए भूमि और श्रम से जुड़ी सहकारी समितियों का गठन करना, और इस क्षेत्र के लिए आयात-निर्यात लिंकेज सुनिश्चित करनास कृषि, खाद्य पदार्थ और पोषण के मुद्दों को फिर से जोड़ कर सामाजिक सुरक्षा योजनाओं को फिर से बनाना और उनका विस्तार करनास कृषि में शामिल महिलाओं की दिक्क़तों जुड़े विशिष्ट मुद्दा आधारित आंदोलनों का संचालन करना, ताकि हितधारकों का विस्तृत गठबंधन किया जा सके।